ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

हिंदी कथा-साहित्य और उत्तर आधुनिकतावाद

Vijendra Prasad Meena

Lecturer in Hindi, Government PG College, Karauli, Rajasthan, India

सार

आधुनिकता ने सम्पूर्ण मानवता को अज्ञान एवं अविवेक से मुक्त करवाकर ज्ञान-विज्ञान और बौद्धिकता के धरातल पर खड़ा किया। परन्तु विश्व युद्धों के बाद अनेक सामाजिक विषमताएँ ऐसी उभरी, जिनका हल आधुनिकता के पास नहीं था। भौतिक विकास, आर्थिक समृद्धि, मशीनीकरण, इहलौकिकता ने आदर्शों , मूल्यों की बलि चढ़ाते हुए मनुष्य के जीवन को कई तरह के अन्तर्विरोधों से भर दिया। आधुनिकता की चकाचौंध लोगों में ऊब बनकर उभरी और उसने उत्तर आधुनिकता के लिए मार्ग खोलना शुरु किया। वर्तमान समाज, संस्कृति, सभ्यता, अर्थव्यवस्था, संवेदना, राजनीति, कला, साहित्य, फैशन, सिनेमा, यौन चिंतन, दर्शन, मूल्य आदि में जो तीव्र परिवर्तन लक्षित हो रहे हैं, उनके मूल में उत्तर आधुनिकता की अवधारणा है।

उत्तर आधुनिकता कोई एक सिद्धांत नहीं, बल्कि अनेक सिद्धांतों का एक नाम है। इसकी कोई बंधी-बंधाई परिभाषा नहीं। उत्तर आधुनिकता परिवर्तित होते लक्षणों को कहा गया है। ''यह एक ऐसा वाद है जो एक स्थिति या दशा की तरह है जो लगातार अस्थिर है, चंचल है, विखंडशील है।'' उत्तर आधुनिकता बहुलतावाद, विकेन्द्रीयता, स्थानीयता, अन्तर्विषयी चिंतन, अन्तर्पाठीयता, अर्थ की अनिश्चितता, युगल विपरीतता, पेरोडी-पेष्टीच आदि को अपनाती है, वहीं सर्वसत्तावाद, कला की शुद्धता-पवित्रता, समग्रता, नैतिकता, स्वायत्तता, पूर्णतावाद एवं महाख्यानों को नकारती है। वह आधुनिकता के कमाये सत्यों पर प्रश्नचिह्न लगाते हुए हर प्रचलित सैद्धान्तिकी को समस्याग्रस्त करती है। ''उसके अनुसार कोई विचार, दर्शन शाश्वत, पूर्ण, अंतिम और स्थायी नहीं है, सब कुछ अनिश्चित और अस्थिर है। हर अवधारणा एक भ्रम है।'' लकां, आलथूसे, फूको, बार्थ, देरिदा, देल्यूज, ल्योतार्द आदि विचारकों में उत्तर आधुनिकता की अभिव्यक्ति मिलती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यूरोप में जन्मी यह विचारधारा हिन्दी में सन् 1980 के आस-पास लक्षित होने लगी और आज हिन्दी की हर साहित्यिक विधा में किसी ने किसी रूप में मौजूद है। ''उत्तर आधुनिकता के सूत्रों को समझे बिना हम अपने समय को नहीं समझ सकते, क्यों कि हमारे न चाहने पर भी वह हमारे बोध में सक्रिय है। हमारी 'आक-थू' से वह नष्ट नहीं होने वाली।''

हिन्दी उपन्यासों का उद्भव भारतेन्दु काल से ही हुआ। प्रेमचन्द के 'गोदान' से आधुनिकता की शुरुआत मानी जा सकती है। स्वातंत्र्योत्तर काल में आधुनिकता अधिक सघनता से महसूस की जाने लगी। आज उत्तर आधुनिकता भी समकालीन उपन्यासों में देखी जा सकती है। हिन्दी उपन्यासों में 1974 ई. के कृष्ण बलदेव वैद कृत 'विमल उर्फ जाये तो जायें कहां' में पहले-पहल उत्तर आधुनिकता चिह्नित होती है। इसकी पुष्टि करते हुए डॉ. हेतु भारद्वाज लिखते हैं- ''कृष्ण बलदेव वैद को 'विमल उर्फ जायें तो जायें कहां' के आधार पर पहला उत्तर आधुनिकतावादी उपन्यासकार कहा गया है।''4 इस उपन्यास में आधुनिकतावादी मूल्यों का नकार है। 'यौन' को एक नये रूप में चित्रित किया है जो कि उत्तर आधुनिकतावादी लक्षण है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

परिचय

'अपनी सलीबें' उपन्यास नमिता सिंह द्वारा रचित है, इसमें उत्तर-आधुनिकतावादी तत्त्वों के दर्शन होते हैं। इसमें स्त्री अस्मिता को रेखांकित किया गया है। स्त्री का साहित्य के केन्द्र में आना उत्तर आधुनिक विचार है। ''विचार का केन्द्रवाद ध्वस्त हो गया है और विकेन्द्रीयता की प्रवृत्ति उभर रही है। दलित, दमित, नारी, अल्पसंख्यक जो कभी हाशिए पर थे, केन्द्र में आ रहे हैं।''5 इस उपन्यास में नारी की समाज में दूसरे दर्जे की हैसियत पर चिन्ता व्यक्त हुई है। स्त्री की प्रगति में समाज की रूढ़ियां बाधक हैं- ''यह जिन्दगी तो जैसे अंधेरे घने जंगलों में निकलने वाली पगडंडी का नाम है। कब किधर से कोई बाघ या भेड़िया हमला कर दे। कुछ पता नहीं।''6 नायिका नीलिमा आई.ए.एस ईशू से प्यार करती है, पर जब नीलिमा को पता चलता है कि ईषु चमार जाति से है तो उसका प्यार समाप्त हो जाता है। यह उत्तर आधुनिक संदर्भ है कि व्यक्ति के बजाय पद, पावर और पैसा महत्त्वपूर्ण है। पात्र ईशू के बहाने जाति पर बहस की गई है- ''भारतीय यथार्थ की एक निर्णायक सांस्कृतिक श्रेणी जाति है, इसमें कोई शक नहीं, बुर्जुवा मानवतावाद ने इस श्रेणी को दबाए रखा। आधुनिकतावादी विमर्षो ने इसे दबाए रखा, जबकि उत्तर आधुनिक स्थितियों में यह श्रेणी फिर अनुभव के क्षेत्र में निर्णायक भूमिका अदा करने लगी है।''[1,2]

'मुझे चाँद चाहिए' सुरेन्द्र वर्मा कृत उपन्यास उत्तर आधुनिक बोध को व्यक्त करता है। इसमें सिलबिल के वर्षा वषिष्ठ बनने और वर्षा वषिष्ठ द्वारा चाँद पाने अर्थात यष पाने की कथा है। अभिनय की उँचाइयों से वह अपने चाँद को पा जाती है। इस उपन्यास में कला बनाम व्यवसाय को लेकर बहस उठती रही है। ''यहाँ से कला के महान मूल्यों की जगह उपभोग के मूल्यों का वर्चस्व शुरू होता है, छवियों और ग्लैमर का निर्णायक संसार शुरू होता है, जिसे वर्षा क्या, कोई नहीं ठुकरा सकता।''8 इस उपन्यास में वर्षा वषिष्ठ मौलिक विद्रोहिणी स्त्रीवादी नायिका के रूप में उभरती है। कस्बे की सिलबिल लखनऊ, एन.एस.डी. होते हुए बम्बई पहुँचती है। उसकी इस यात्रा में अनेक आधुनिकतावादी मूल्य विखंडित हो जाते हैं। सिलबिल दमित यौन की प्रतीक है। वह अपनी अतृप्त इच्छाओं की राह में दिव्या, मिट्ठू, हर्ष, सिद्धार्थ, शिवानी, अनुपमा आदि से यौन या लैस्बियन सम्बंध जोड़ती दिखती है और अन्त में हर्ष के बच्चे के अनब्याही माँ बनकर देह मुक्ति की घोषणा करती है। ''वर्षा एक नई तरह की औरत है जिसे आधुनिक कहकर परिभाषित नहीं किया जा सकता, वह मध्यमवर्गीय पारम्परिक औरत से अलग है और साथ ही पारम्परिक है।''9 वर्षा वशिष्ठ की व्याख्या फ्रायड से नहीं, लकां से हो सकती है। वर्षा का आत्म आत्मरतिवादी है। वह देह के सौन्दर्य की खोज में संलग्न है। अभिनय भी इसी आत्मरति का विस्तार है। अभिनय की उँचाइयाँ छूकर ही अपने सौन्दर्य लोक या चाँद को पाती है। अन्तर्पाठीयता, कलाकार के लिए निरंकुश सत्ता की मांग, नये अर्थषास्त्र, यष-पैसे की चाहत, स्त्री अस्मिता, देह की कथा आदि उत्तर आधुनिक लक्षण इस उपन्यास में मिलते हैं।

'डूब' वीरेन्द्र जैन का उत्तर-आधुनिकतावादी विशेषताओं से युक्त उपन्यास है। इसमें पात्र 'माते' के माध्यम से कथा कही गई है। विकास योजनाओं के नाम पर विनाष को अभिशप्त ग्रामीणों की व्यथा इसमें चित्रित है। माते विकास विरोधी चरित्र हैं। वह विकास में विश्वास नहीं रखता। वह कहता है- ''उस विकास से क्या फायदा जो मनुष्यों को उखाड़ दे, बेघरबार कर दे, उन्हें गलत जगह रोप दे, उनकी सहजात इच्छाओं को रौंद दे?'' इस आधुनिकतावादी विकासवादी युग में यह ऐसा पात्र सामने आता है जो हिलने को तैयार नहीं है। उसके दाँत में सुपारी शुरू में फंस जाती है, वह आखिर तक माते की तरह दृढ रहती है। माते कहता है- ''दांतन में जा सुपारी तो मोती साव की नाईं मो से चैंट गई है।''10 इसमें एक भूमिपुत्र विकास की अवधारणाओं पर प्रश्नचिह्न लगाता है। यह विकास जड़ों से काटने की साजिश में लगा है। पूँजीवादी व्यवस्था गांवों को लील जाने को उद्यत है। शहरीकरण, विकास को चुनौती देकर इस उपन्यास में मार्क्सवाद जैसे महाख्यान का नकार किया है। ''उत्तर आधुनिकतावाद घोषित तौर पर कहता है कि साहित्य में महाख्यान का युग समाप्त हो गया है और अब कोई न तो सर्वमान्य आलोचना सिद्धान्त है, न हो सकता है।''[3,4]

''कुरु-कुरु स्वाहा'' में मनोहर श्याम जोशी ने उत्तर आधुनिक गद्य प्रस्तुत किया है। आधुनिक युगीन अस्तित्ववाद का इसमें

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

अन्त है- ''बात यही है कि एक वह होता है, एक वह होती है और जो कुछ होता है, वह कुछ भी नहीं होता क्योंकि वह उनके दो होने से होता है और सच्ची-मुच्ची वे दो थोड़ी ही होती है।''[5,6] इसमें मनोहर श्याम जोशी के तीन चेहरे हैं। ये तीनों जब चाहे गडमड करते हैं। कहानी का कोई भी पात्र स्थिर चरित्र नहीं रहता। यह मेटा नैरेटिव है। इस उपन्यास की नायिका पहुँचेली सजग, चेतनाशील नारी है। उसे शक्ति के मिथक से जोड़कर नारी अस्मिता की बात कही है पुरुष प्रधान समाज एवं संस्कृति पर चोट करते हुए वह कहती है- ''तुम्हारे सपने पुल्लिंग मात्र है और मेरे दुःख स्त्रीलिंग मात्र? प्रार्थना करो कि यह तुम्हारा यह पौरुष पिटा हुआ फिकरा न साबित हो।''[7,8]पहुँचेली की व्याख्या पुरानी थ्योरियों से नहीं, उत्तर आधुनिकतावादी लकां से हो सकती है। पहुँचेली हर बार पाठक की पकड़ से फिसल जाती है कि पाठक उसे टैक्स्ट में फिक्स नहीं कर पाता। इस उपन्यास का षिल्प, संरचना और भाषा भी उत्तर-आधुनिक है। पेरोडी-पेष्टीच, अन्तर्पाठीयता, अर्थ की अनिष्चितता यहाँ विद्यमान है। पेरोडी इस उपन्यास में कई जगह है, यथा-'' तुम पतुरिया के प्यार के इस चक्कर से बाद में साहित्य का चक्कर चलाओगे और झूठ को सच बनाकर पतुरिया को छिन्नमस्ता के समकक्ष नही तो समानान्तर अवष्य रख दोगे।''[9,10] पेरोडी के साथ पेष्टीच की भी झलक इसमें मिलती है। इसके संवादों में अन्तर्पाठीयता है। इसमें भाषा ऐसा खुला खेल है कि चालू समीक्षाएँ संकटग्रस्त हो जाती हैं। यह खेल साहित्य, वृत्तान्त, कथा को खत्म कर देता है। उसे विविध स्तरीय किस्सा बना देता है जिसका फिर केवल विखंडन ही किया जा सकता है।

'हरिया हरक्यूलीज' की हैरानी' भी मनोहर श्याम जोषी द्वारा रचित है। इसमें गूमालिंग के जादुई बिम्ब द्वारा न्यू फ्रायडवाद के सीजोफ्रेनिक चित्त को उभारा गया है। पूरी कथा परम्परावादी पाठक के लिए एक शौचालय दर्षन है पर यही उत्तर आधुनिकता का 'टेक्स्ट' है। उत्तर आधुनिकता के युग में सत्य की प्रतिनिधिकता संकटपूर्ण हो गई है। सत्य और झूठ आपस में ऐसे मिल गए हैं कि वास्तविकता जानना मुश्किल हो गया है। यही इस उपन्यास में है- ''संषयात्मा भी तीन गुटों में बंट गए थे, एक डॉक्टर नीलाम्बर और पत्रकार धारी का था... दूसरा गुट, जिसका झण्डा हेमुली बोज्यू मरते दम तक उठाये रही... संषयात्मा गुट की तीसरे घड़े ने, जिसकी नेता विदूषी राजनीतिक कार्यकर्त्री डॉक्टर कौमुदी त्रिपाठी थी...।''[11,12]

इस उपन्यास में पहल कभी हैरान न होने वाल हरिया के साथ पाठक भी हैरान होते हैं कि गूमालिंग था कि नहीं, हरिया और हैरी स्मिथ एक थे या नहीं। इन प्रश्नों से कथा को अन्तर्पाठीयता मिलती है। पाठक अपने-अपने अर्थ निकालते हैं। इस उपन्यास में बौद्रीआ की छलना पैदा हुई है जिसने कथा के भोलेपन को समाप्त कर उसे 'पाठ' में बदल दिया है। इस उपन्यास में कोई समग्र सत्य उभर कर नहीं आता। क्योंकि उत्तर आधुनिकता समग्रता की विरोधी है।[13]

विचार-विमर्श

श्री लाल शुक्ल का 'राग दरबारी' उत्तर आधुनिकतावादी विशेषताओं से युक्त है। यह उपन्यास व्यंग्यात्मक शैली में वर्णित है। कथा का केन्द्र शिवपालगंज है। लेकिन यह कथा भारत के किसी गांव की हो सकती है। इस उपन्यास में मूल्यहीनता, स्वार्थ, अवसरवादिता, अमानवीयता, नैतिक गिरावट, कुत्सित राजनीति जैसे आधुनिकतावादी लक्षणों के साथ ऐसी स्थितियाँ चित्रित हुई हैं जो उपन्यास को उत्तर आधुनिक बनाती है। लेखक पाठक को उत्तेजित नहीं करता। समस्याओं को हटाने के लिए लेखक कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करता। यही उत्तर आधुनिक संदर्भ है कि लेखक कोई सुधारक नहीं है। राग दरबारी पुराने पाठों के बजाय अनेक नये पाठों की मांग करता है। इसकी पठन पद्धति यथार्थवादी नहीं है, इसमें अन्तर्पाठीयता है। जैसे थाने के वर्णन में लेखक कहता है- ''हथियारों में कुछ प्राचीन राइफलें थी जो लगता था गदर के दिनों में इस्तेमाल हुई होंगी। वैसे सिपाहियों के साधारण प्रयोग के लिए बांस की लाठी थी, जिसके बारे में एक कवि ने बताया है कि वह नदी नाले पार करने और झपट कर कुत्ते को मारने में उपयोगी साबित होती है।''[14,15]

इन उपन्यासों के अलावा विनोद कुमार शुक्ल के 'खिलेगा तो देखेंगे', मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम', दूधनाथ सिंह का 'नमो

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

अंधकार', भीमसेन त्यागी के 'सुरंग', जयप्रकाष कर्दम के 'छप्पर', रामदरश मिश्र के 'बीस बरस', मिथलेश्वर के 'यह अंत नहीं' एवं वीरेन्द्र सक्सेना के 'खराब मौसम के बावजूद' आदि में भी उत्तर आधुनिक युग की आहट सुनाई देती है। 'खिलेगा तो देखेंगे' में एक खुला अंत या निष्कर्षहीनता प्रकट हुई हैं अन्तर्पाठीयता संभव होती है। 'इदन्नमम' मे कई केन्द्र टूटे हैं। स्त्री, जाति आदि कई नये केन्द्र बने हैं। यही स्त्री अस्मिता 'सुरंग' में भी वर्णित है। 'छप्पर' और 'बीस बरस' में दलित और स्त्री केन्द्र में आए हैं। 'खराब मौसम के बावजूद' में आधुनिकतावादी मूल्यों को नकारा गया है। इसमें विवाह संस्था पर ही प्रश्नचिह्न लगाया है। विवाह के कारण प्रेम और सेक्स का समुचित समन्वय नहीं हो सकता।
समकालीन युग में उपन्यासों में एक नवीन जीवन दृष्टि मिलती है। इनकी भाषा नये सन्दर्भो वाली है। आधुनिकतावादी मूल्य चेतना इनमें है पर कुछ उपन्यासों में नवीन बोध प्रकट होने लगा है। इनमें न कुछ अपूर्व है न ही अलौकिक, न कुछ पावन है, न कुछ विलक्षण, न ही कुछ दार्शनिक है न कुछ आध्यात्मिक। ये उपन्यास कोई समाधान न प्रस्तुत कर खुले अंत के साथ रह जाते हैं। इसका कारण है कि आज के समय में सभी समस्याओं का हल आदर्शों और नैतिकता से संभव नहीं है। आधुनिकता के मूल्य और आदर्श आज दरक गए हैं, उनकी व्यर्थता साबित हो रही है। इसलिए आज लेखन 'सृजन' नहीं, 'टेक्स्ट' है। इस टेक्स्ट में शाश्वत, पावन, स्थायी, कल्याणकारी, आध्यात्मिकता जैसे अर्थ सन्दर्भ मृत हैं। साहित्य ने अब उस सृजनात्मकता की ओर कदम बढा दिया है, जिसे उत्तर आधुनिकता कहा जाता है। समकालीन उपन्यास वर्तमान समय और समाज को उद्घाटित करते हैं। इन उपन्यासों को पुरानी समीक्षाओं के आधार पर विश्लेषित नहीं किया जा सकता। उत्तर आधुनिकता के आधार पर ही नये उपन्यासों को समझकर वर्तमान समय और समाज को जान सकते हैं।[16,17]

परिणाम

उत्तर आधुनिकतावाद बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में शुरू हुआ एक सैद्धांतिक आन्दोलन है। यह विशुद्ध साहित्यिक आन्दोलन नहीं है। साहित्य के साथ साथ इसने कला के कई रूपों को भी प्रभावित किया है। इसने पुराने सिद्धांतों पर फिर से विचार करने पर जोर दिया। उत्तर-आधुनिकतावाद एक ही साथ आधुनिकतावाद का विकास भी है और विलोम भी आधुनिकतावाद ने मनुष्य को केंद्र में रख कर अपना विकास किया था। मनुष्य ने अपनी सुख-सुविधा को केंद्र में रखा। इसके लिए नए नए वैज्ञानिक आविष्कार किये। प्रकृति पर नियन्त्रण पाने की कोशिश की। पूँजी का विकास हुआ। भौतिक विकास को ही मनुष्य का वास्तविक विकास माना जाने लगा। परिणाम यह हुआ कि प्रकृति के साथ समाज का एक बड़ा हिस्सा भी हाशिए पर चला गया।

उत्तर-आधुनिकतावाद का विकास आधुनिकतावाद की इन्ही प्रवृत्तियों के विरोध में हुआ। उत्तर-आधुनिकतावाद ने हाशिए की आवाज़ को केंद्र में लाने की कोशिश की। विकास की धारणा को प्रश्नांकित किया। परिणामस्वरूप हाशिए की चीज़ें केंद्र में आने लगीं। आदिवासी विमर्श, दलित विमर्श, स्त्री-विमर्श, पर्यावरण संवेदना आदि कई विमर्श शुरू हुए। समाज में शुरू हुए इन विमर्शों ने साहित्य, कला, राजनीति, फिल्म आदि कई चीज़ों को प्रभावित किया। आधुनिकता की मान्यताओं को प्रश्नांकित करते हुए हाशिए की आवाज़ से उत्तर-आधुनिकतावाद की शुरुआत होती है। आधुनिकता मनुष्य को केंद्र में रखती आई है। उसने औद्योगीकरण को बढ़ावा दिया। कल-कारखानों को आधुनिकता ने मन्दिर के सदृश्य ठहरा दिया। मनुष्य ने अपनी सुख-सुविधा के लिए प्रकृति और प्रकृति के सबसे अधिक करीब रहने वालों का जम कर दोहन किया। आधुनिक मानव को लगने लगा कि उसने प्रकृति को अपने वश में कर लिया है। पर बात ऐसी नहीं थी।[18,19]

लोग पूंजीवाद के विकसित रूप और तकनीक को समाज के हर क्षेत्र में महसूस कर रहे थे। आधुनिकता के साथ ही साम्राज्यवाद का भी उदय हुआ। मार्क्स ने कहा है कि साम्राज्यवाद भारत में सामाजिक बदलाव ला रहा था। लेकिन इस प्रक्रिया में साम्राज्यवादियों के इरादे नेक नहीं थे क्योंकि इसमें उनके अपने हित सर्वोपरि थे। अतः उन्होंने आधुनिकता का इस्तेमाल अपने फायदे के लिए ही किया। आधुनिकता में मौजूद भौतिक पक्ष को उन्होंने अत्यधिक महत्त्व दिया। इस कृत्य और स्वार्थ के बावजूद उन्होंने जो कुछ भारत के लिए किया वह अनजाने में ही भारत का इतिहास बदलने का कारण बना। ये विरोधी बातें उत्तर-आधुनिकतावाद के कार्य-कारण को समझने में मदद करती हैं। साम्राज्यवादियों ने बड़ी ही चालाकी से भारतवासियों का एक वर्ग

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

तैयार किया, जिसे मध्य वर्ग कहते हैं। यह वर्ग अपने मालिकों का अनुसरण करता था तथा उनकी संस्कृति को प्रशंसा की नज़र से देखता था। लिहाज़ा बहुत हद तक वह अपनी संस्कृति से दूर हो गया। इस मध्य वर्ग ने ही भारत में अंग्रेजों को सत्ता जमाने में मदद की। इनका कार्य और व्यापर इनके एजेंट करते थे और ये झूठ फैलाते रहते थे। इसके साथ ही इन्होने सुनियोजित तरीके से अपनी भाषा और संस्कृति को सबसे श्रेष्ठ बताने की कोशिश की और भारतीय संस्कृति को कमर तक आँका; इस कार्य में वे काफी हद तक सफल भी हुए। वे जिन मूल्यों और मानवीयता की बात आधुनिकता के सन्दर्भ में करते थे, उसे उन्होंने कभी नहीं निभाया। इस प्रकार उनका दोमुँहापन भारतीयों के सामने आने लगा। एक ओर तो वे भारत के समृद्ध साहित्य का अध्ययन कर रहे थे; दूसरी ओर यहाँ की संस्कृति को नकार भी रहे थे। जार्ज ओरवेल इसे कपटपूर्ण आचरण कहते हैं। उन्नीसवीं सदी में मार्क ट्वेन ने अमेरिका द्वारा फिलिस्तीन को अपने कब्ज़े में लेने के बाद लिखा कि यह एक विरोधाभास है कि अमेरिका में तो लोकतंत्र रहे और अन्य देशों में साम्राज्यवाद। इसके आलावा नस्लभेद की नीति भी उनके अवचेतन में विद्यमान थी।[20,21] अमेरिका में दास प्रथा सैद्धांतिक रूप से समाप्त होने के बाद भी व्यवहार में समाप्त नहीं हुई थी। नस्लभेदी नीति का व्यापक प्रभाव दूसरे महायुद्ध में दिखाई दिया जब हजारों यहूदियों को मौत के घाट उतार दिया गया। यह विश्व के इतिहास की सबसे दुखद घटना थी। यूरोप इस घटना से विलोड़ित हो गया था एवं पश्चिम के विकास और इतिहास की प्रक्रिया पर एक सवालिया निशान लग गया। इसके परिणामस्वरूप आधुनिकता की दो मान्यताओं को चुनौती मिली। पहली मानव उत्कृष्टता की ओर बढ़ रहा है तथा शीघ्र ही एक आदर्श मानव बन जाएगा; दूसरी, समाज भी एक आदर्श समाज को ओर जा रहा है, जहाँ मनुष्य अपने तरीके से जीवन जी सकेंगे तथा अपना धर्म पालन करने में स्वतन्त्र होंगे। विकास, तार्किकता, समीक्षात्मक खोज, धर्म निरपेक्षता सब बेमानी हो गए | इस त्रासदी का प्रभाव हर संवेदनशील नागरिक पर पड़ा, विशेष रूप से विद्वानों और लेखकों पर जो समाज की हर हलचल को रेखांकित करते रहे हैं। लेखक इस त्रासदी से जूझने के तरीके तलाश करने लगे क्योंकि यह अनुभव आधुनिकता के संदर्भ में अप्रत्याशित था। अतः इसे रूप देना और काल्पनिक चेतना के अधीन लाना मुश्किल हो गया | परिणामस्वरूप वास्तविकता से मोह भंग हो गया। नाज़ी एक ओर जहाँ जर्मनी से मानवता की बात कर रहे थे, बच्चों को दूध भेज रहे थे, वहीँ दूसरी ओर गैस चैम्बर में यहूदियों को मारा जा रहा था। उनकी मनुष्यता को किस श्रेणी में रखा जाए। डेविड वार्थाल्मे अपने उपन्यास 'स्नो व्हाईट' में मनुष्य की बदली हुई परिभाषा इस प्रकार बताते हैं, "ऐसा आदमी बनने की कोशिश करे जिसे जो वह कर रहा था उसे कुछ भी मालूम नहीं था। अभी भी उसे उसके बारे में मालूम नहीं है। उसने हमें जो निर्देश दिया वह रोचक नहीं था। एक पेड़ ज्यादा रोचक है। एक बंद डिब्बा ज्यादा रोचक है।" संबंधों को परिभाषित करना सरल नहीं है। इस उपन्यास में लेखक वार्थाल्मे की समस्त पूर्व अवधारणाओं, चरित्र, मनोविज्ञान, एवं लेखक के अधिकार को चुनौती देते हैं। उसी उपन्यास में उनका कहना है कि एक ही अनुभव की अनेक व्याख्याएँ हो सकती हैं।

सैमुअल बैकेट जो उत्तर आधुनिकतावादी काल के प्रमुख नाटककार और उपन्यासकारों में शामिल हैं। वे इस नए अनुभव को इस प्रकार व्यक्त करते हैं: "वर्णन करने के लिए कुछ नहीं है। ऐसा कोई तरीका नहीं है जिससे इसका वर्णन किया जा सके। इसे व्यक्त करने की शक्ति नहीं है। पर साथ ही वे यह भी कहते हैं कि इसे व्यक्त करने का दायित्व लेखक पर ही है। यही सबसे बड़ी चुनौती भी है। इस भ्रांति और अव्यवस्था को व्यक्त करने का तरीका उसे ही निकलना है। कहीं अर्थहीन वाक्यों और कहीं अर्थहीन वार्तालाप के द्वारा इसे व्यक्त किया गया है। वे अनुभव और भाषा में विच्छेद की बात करते हैं। मौन का उपयोग करते हैं क्योंकि मौन शब्दों से अधिक बोलता है। अपने नाटकों में वे मौन का निर्देश देते हैं। कहीं मौन कम तो कहीं मौन अधिक। वे चलने-फिरने का निर्देश देते हैं लेकिन चलना-फिरना नहीं है।"[22]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

उत्तर-आधुनिकतावाद के परिवर्तनकारी बिंदु

1. महाशून्यता का अनुभव

उत्तर-आधुनिकतावाद का कारण दो और परिवर्तनकारी शक्तियाँ रहीं। प्रथम, पूंजीवाद का विकसित रूप जिसमें मनुष्य का संबंध मानवीय भावनाओं से टूट गया। यहाँ संबंध अमूर्त हो जाते हैं। मार्क्स इसको रेईफिकेशन कहते हैं। यहाँ संबंधों में स्थायित्व ढूंढना अर्थहीन है। भीतर की शक्ति समाप्त हो गई है और और मनुष्य एक बृहत् नीरसता का हिस्सा बन गया है। बाहर से सबकुछ ठीक दिखता है पर भीतर एक महाशून्य है, एक खालीपन है। इससे वह एक सतही तौर पर जीता है। वह अपने जीवन के असंतोष और शक्तिहीनता का कारण नहीं जानता। अपने खालीपन को वह समझता है कि अपव्ययता से दूर किया जा सकता है। लेकिन फिर भी असंतोष बना रहता है। वह एक स्थिति से दूसरी स्थिति में जाता है, लेकिन फिर भी उसे आत्म-संतोष नहीं मिलता। वह एक नकली जिंदगी जीता है जिससे निकलने का कोई उसे नहीं मिलता। स्वयं के साथ उसका संवाद नहीं हो पाता ऊपर से समाज के साथ उसका संवाद टूट जाता है।

2 मानवतावाद का पतन

तकनीक या प्रौद्योगिकी पूंजीवादी व्यवस्था की परिवर्तनकारी शक्ति है। इसमें मनुष्य एक यंत्र बन जाता है और और एक पुर्जे की तरह काम करता है। व्यक्ति वस्तुतः एक व्यक्ति न होकर एक नम्बर बन जाता है जिसे आप गिन सकते हैं। तकनीकि की दुनिया में मनुष्य अपने आपको समायोजित करता है, बदलता नहीं। धीरे-धीरे वह तकनीकि की गिरफ्त में आ जाता है, उसीसे उसकी दिनचर्या निर्धारित होने लगती है। मानवता जैसे गुम हो गई है। मानव मात्र की इच्छाएँ या आदतें एक जैसी हो जाती हैं। यदि उसकी आदतें भिन्न होंगी तो सामाजिक मशीनरी में घर्षण पैदा होगा। मशीन एक कविता में लुईस लिखते हैं :

मरने से पूर्व प्रार्थना

मैं अभी पैदा नहीं हुआ हूँ।

भगवान मुझे शांति दे

जिससे मैं उनके खिलाफ खड़ा हो सकूँ।

जो मेरी मानवता को जमा देना चाहते हैं।

जो मुझे प्राणघातक स्वचालित मशीनों में धकेल रहे हैं

मुझे मशीन का पुर्जा बनाना चाहते हैं

एक चीज़ बनाना चाहते हैं

आधे चेहरे के साथ, एक चीज़

"I am not yet born; O fill me

With strength against those who would freeze my

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

Humanity, would dragoon me into a lethal automaton,

Would make me a cog in a machine, a thing with

One face, a thing, and against all those

Who would dissipate my entirety, would

Blow me like thistledown hither and

Thither or hither and thither

Like water held in the

Hands will spill me."

(Prayer before death, Louis Macneice, https://genius.com/Louis-macneice-prayer-before-birth-annotated)

इसी तरह का एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है -

(What nudity as beautiful as this

Obedient monster purring at its toil;

These naked iron muscles dripping oil

And the sure-fingered rods that never miss.

This long and shining flank of metal is

Magic that greasy labour cannot spoil;

While this vast engine that could rend the soil

Conceals its fury with a gentle hiss.

It does not vent its loathing, it does not turn

Upon its makers with destroying hate.

It bears a deeper malice; lives to earn

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

It’s masters bread and laughs to see this great

Lord of the earth, who rules but cannot learn,

Become the slave of what his slaves create.

ऐसे प्रौद्योगिकी के युग में मानवता के लिए जगह ही कहाँ है? बेकेट (beckett) के ‘वेटिंग फॉर गोदो’ (waiting for Godot) में चरित्र किसका इंतजार कर रहे हैं – मालूम नहीं, शायद भगवान का ! वेटिंग फॉर गोडोट (शमूएल बेकेट द्वारा रचित एक नाटक है, जिसमें दो मुख्य पात्र व्लादिमीर और एस्ट्रागन एक अन्य काल्पनिक पात्र गोडोट के आने की अंतहीन व निष्फल प्रतीक्षा करते हैं। इस नाटक के प्रीमियर से अब तक गोडोट की अनुपस्थिति व अन्य पहलुओं को लेकर अनेक व्याख्यायें की जा चुकी हैं। इसे "बीसवीं सदी का सबसे प्रभावशाली अंग्रेजी भाषा का नाटक" भी बुलाया जा चुका है।[1] (बर्लिन, एन. 1999) ऐसे ही रोबे ग्रिलेट का एक उपन्यास है ‘द इररेर्स’ यह हत्यारों के समूह की कहानी है, उन्हें एक आदमी को मारने का जिम्मा सौंपा जाता है। गलती से वह किसी अन्य आदमी को मार देते हैं। जब तक वे सही आदमी को नहीं मार देते तब तक वे असहज रहते हैं। उस आदमी को मार कर ही वे सामान्य हो पाते हैं। ग्रिलेट बताना चाहते हैं कि जैसा समाज होता है वैसा ही उपन्यास भी होता है। दोनों ही स्वचालित यंत्र की तरह काम कर रहे हैं, लेकिन उससे बाहर निकलने का रास्ता नहीं मिलता। लगता है मनुष्य एक जाल में जकड़ गया है। जिससे बाहर न निकल सकना उसकी नियति है। यह ठीक उसी तरह होता है जैसे किसी बड़े पत्थर को पहाड़ी पर चढाने का प्रयास किया जाए और वह बार-बार नीचे गिर जाए।[23]

3. मानवीय मूल्यों का अंत

यह बहुत हद तक सही है कि उत्तर-आधुनिकतावादी साहित्य में निश्चित मानवीय मूल्य कोई विशेष महत्त्व नहीं रखते। बहुत से आलोचक निराशावादी, नकारात्मक और और अतार्किक तत्त्वों को ही महत्त्व देते हैं। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि इसमें आधुनिकतावादी सभी अवधारणाओं को नकार दिया गया है। उत्तर आधुनिकतावादी भी नए अबुभावों को बांधने पर जोर देते हैं। और अनुभव के बंधन के लिए नए रास्ते तलाश कर रहे हैं क्योंकि नैतिक और बुद्धिमत्तापूर्ण विचार अप्रासंगिक हो गए हैं या मृतप्राय हैं। लेस्ली फेडरर, सुसेन सोंटेग, जॉर्ज साइलेंस, रिचर्ड पायोनियर, और ईहाव हसन इसको एक महत्वपूर्ण खोज मानते हैं।

4 नई आलोचना

उत्तर आधुनिकता को अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया गया है। फ्रैंक करमोडे और गेराल्ड ग्राफ इसको आधुनिकतावाद का विस्तार मानते हैं। माल्कन ब्राडबरी और उहाब हसन इसे आधुनिकतावाद का विस्तार भी मानते हैं एवं इससे अलग भी। इरविंग होम इसे ह्रास और पतन मानते हैं। फ्रेडरि जेमिसन इन दोनों को अलग-अलग घटना मानते हैं क्योंकि दोनों अपने मायने और सामाजिक कार्य में अलग-अलग हैं। वे इसे मार्क्सवादी विचारधारा से जोड़कर देखते हैं। वे उत्तर-आधुनिकतावाद को लेट-कैपेटेटिव या मल्टीनेशनल केपेतटेटिव से जोड़कर देखते हैं, जिसने सांस्कृतिक क्षेत्र को बिलकुल बदल दिया है।[24]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

रेमंड विलिअम कहते हैं कि उत्तर-आधुनिक लेखकों और आलोचकों ने कुछ क्षेत्रों को दर्शाया है और कुछ क्षेत्रों की उपेक्षा की है। अतः इसे विचारधारा के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। उनके अनुसार आधुनिकता का आधार दो क्षेत्र हैं :

1. सामाजिक वास्तविकता की नवीन प्रक्रिया, जिसने समाज को एक नवीन नैतिक विवेचना दी ;

2. उन बाह्य पहलुओं का नवीनीकरण, जिसने भाषा को नए तरीके से लिखने की प्रेरणा दी।

सन्दर्भ को नकारना, इतिहास को नकारना और केवल टेक्स्ट पर ही केन्द्रित होना एक भ्रमित विचारधारा का हिस्सा है। जैसे उत्तर-आधुनिकतावादी मानते हैं कि जीवन में अगर बिखराव है तो उसको समझने का तरीका केवल टेक्स्ट पर ही केंद्रित करना एक भुलावा है। इसी विचारधारा का हिस्सा है न्यू क्रिटिसिज्म टेक्स्ट दुनिया से हट कर शब्द पर केन्द्रित हो गई है। इसके लिए तरह-तरह के नकार इस्तेमाल किए जाने लगे। विलिअम्स के अनुसार सन्दर्भ से हट कर कोई साहित्यिक कृति अपना पूरा संसार नहीं बना सकती। वे कहते हैं यदि उत्तर-आधुनिकता की जकड़न से बाहर निकलना है तो उस परम्परा को पुनः जागृत करना होगा जिसे उत्तर-आधुनिकता की रफ़्तार ने पीछे छोड़ दिया है। और उन कृतियों पर ध्यान देना होगा जिनमे समुदाय को दुबारा स्थापित किया जा सके। स्पष्ट है कि विलियम्स उस बदलाव के ख़िलाफ़ लिख रहे हैं जो अनुभव करने और उस अनुभव को व्यक्त करने की प्रक्रिया में आ गया है। यदि इतिहास को खंगाला जाए तो उन सब मुद्दों को केंद्र में लाना होगा जो नई विचारधारा में हाशिए पर डाल दिए गए हैं। यहाँ यह याद रखना चाहिए कि अक्सर किसी कृति की तलाश में उसके मूल सन्दर्भ को भूल जाना ठीक नहीं है।

रेमंड विलियम्स जिस समय लिख रहे थे उस समय विश्व में बदलाव का युग था। एक के बाद एक देश साम्राज्यवादी चंगुल से मुक्त हो रहे थे। वहाँ के लोग अपने अधिकार क्षेत्र के मूल्यों और अधिकारों की बात कर रहे थे। उनके एजेंडे में काले अमरीकी, राष्ट्रवादी तत्त्व, दलित या उनसे समानता रखने वाले थे। यदि उन्हें ऐतिहासिक सन्दर्भ में नहीं देखा जाएगा तो उनके मुद्दे बेमानी हो जाएँगे। ये विश्व भर में उत्तर-आधुनिकतावाद के विरोध में खड़े थे। इस लिए उत्तर-अधुनिकतावाद के साथ इन तत्त्वों को भी ध्यान में रखना चाहिए। हालाँकि इसका खतरा बना रहता है कि यह उस वृहद विचारधारा में दब न जाए। भारत में उत्तर-आधुनिकतावाद की बात करते समय उनकी वेदना और अनुभव को नकारना नहीं चाहिए। भारत में लेखक अभी उस हद तक नहीं पहुँचा है जहाँ एक उत्तर-आधुनिक विचार गया है।

इसका अर्थ यह नहीं कि भारतीय साहित्य उत्तर-आधुनिकतावादी प्रभाव में नहीं आया। यहाँ उत्तर-अधुनिक्तावादी चेतना को उसी तरह स्वीकार कर लिया जिस तरह आधुनिक को स्वीकार किया था। अंतर केवल इतना है कि उत्तर-आधुनिकता पूरी तरह से आयातित है जबकि आधुनिक चेतना कुछ हद तक देशज थी। उत्तर आधुनिक लेखक उन तत्त्वों को स्वीकार करते हैं जो या तो मौजूद नहीं हैं या विकसित नहीं हैं। जैसे विमुखीकरण की प्रकिया जो समय बड़े शहरों तक थी और केवल कुछ लोगों तक सीमित थी, लेकिन पूरे भारत में यह कल्पना आरोपित लगती है। हिंदी में उत्तर-आधुनिकता की चर्चा सबसे पहले निर्मल वर्मा ने की। निर्मल वर्मा भारत के उन चंद लेखकों में थे जो देश-परदेश में हो रहे साहित्यिक-सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन को एक साथ देख रहे थे। वे शायद पहले हिंदी लेखक हैं जिन्होंने आधुनिकता के विकास मॉडल पर गम्भीर सवाल उठाए।[25]

5 संस्कृति का प्रश्न

पिछले दो-तीन दशकों में बहुत तेज़ी से उदारीकरण हुआ है, इससे भौतिकता प्रबल रूप से समाज में व्याप्त हो गई है। शुरू में इसका विरोध हुआ लेकिन बाद में वह खत्म हो गया। ऐसी प्रक्रिया विचारों को प्रभावित करती है। यह विचार फिर साहित्य को प्रभावित करते हैं। प्रश्न यह है कि लेखक उस अनुभव को कहाँ से देखते हैं? उदारीकरण के भीतर से या उस स्थान से जहाँ उसे समझने और मायने देने के प्रयास शुरू होते हैं ! लेकिन यह प्रयास पूंजीवादी जटिल प्रक्रिया में दब जाता है और यह पता ही नहीं चलता कि कब उसकी गिरफ्त में आ गया। आधुनिकतावाद की एक विलोम अवस्था की प्राचीनता से तुलना होती थी और उत्तर-

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

आधुनिकतावाद की आधुनिकतावाद से। सारी संस्कृतियाँ उत्तर-अधुनिक्तावाद से प्रभावित हैं, यह कहना ठीक नहीं। रेमंड विलियम कहते हैं कि आधुनिकतावाद अप्रासंगिक नहीं होता; इस लिए अनुभव को फिर से स्थापित करने के लिए परम्परा से जोड़ना होगा। वे संस्कृतिक कृतियों की बात करते समय बची हुई और उबरते रूप की बात करते हैं। काले अमेरीकी जिस तरह का साहित्य लिख रहे हैं वह काफी हद तक प्रभुत्वपूर्ण विचारधारा से अलग है। इसी तरह तीसरी दुनिया के लेखकों के सामने सवाल है कि यदि वे उत्तर-आधुनिकतावाद को पूरी तरह से स्वीकार करते हैं तो वे सदियाँ लांघ जाते हैं। वे समझने लगते हैं कि पश्चिम के देशों की त्रासदी उनकी भी है, जिसमे वैश्विक असमानता है। लेकिन अपने चरों ओर की दुर्दशा और पीड़ा उन्हें चिंतित करती है। लेकिन यदि वह उत्तर-आधुनिकतावाद के रूप को स्वीकार करते हैं तो क्या उनके कंटेंट को ना कह सकते हैं ! इस दुविधा से निकलने के लिए काले अमेरिकी लेखकों, अफ़्रीकी लेखकों और तीसरी दुनिया के लेखकों ने अपनी चेतना को टटोला और उसकी अभिव्यक्ति उनकी आत्म-कथाओं में हुई। रेमंड विलियम्स की बात सही है कि तीसरी दुनिया को जो परोसा जाता है, वे उसे वैसे ही स्वीकार करते हैं। इसे वे सेलेक्टिव एसोसिएशन कहते हैं। चुने हुए तथ्यों को स्वीकार करके वे विवेचना को फिर से स्थापित करते हैं, जिसमे ऐतिहासिक चेतना और वास्तविक चेतना अलग नहीं होती।

6 चयन का अधिकार

तीसरी दुनिया के लेखकों के पास अभी भी चुनने का अधिकार है। उसमें वह समकालीन सभ्यता को एक विवेचनात्मक भौतिकता से देख सकते हैं। यथार्थवादी स्थिति का वर्णन करने वाली शब्दावली को वे उच्च कला के नाम पर नकारते हैं। इन देशों के लेखक अब भी अतीत से अपना सम्बन्ध कायम रखते हैं। यहाँ तक कि व्यक्ति और समुदाय का संबंध भी टूटा नहीं है। इन देशों में स्मृति के माध्यम से साहित्य और कलाओं में परंपरा का नवीनीकरण हो रहा है। इसका अर्थ यह नहीं है कि तीसरी दुनिया के लोग अतीत में रहने लगे हैं। पर अतीत की एक नई व्याख्या शुरू हो गई है। यह व्याख्या आधुनिकता की व्याख्या से अलग है। अब मध्यकालीन कह कर या प्राचीन कह कर यूँ किसी कृति या मूल्य को नकारा नहीं जा सकता। उन पर पुनर्विचार हो रहे हैं।

पिछले दो दशकों से उत्तर-आधुनिकता के व्यापक मूल्यों के खिलाफ एक मुहिम चली है। यह उत्तर-उपनिवेशवादी विचारधारा के तहत है जो उपनिवेशवादी मूल्यों को नकारते हैं। इससे राजनीतिक वास्तविकता के बारे में चेतना विकसित हुई है। अब दलित और नारीवादी लेखक भी अपनी बात स्वतन्त्र ढंग से कह रहे हैं। उत्तर-आधुनिक साहित्य चिन्तन को भारतीय परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए हिंदी की दो रचनाओं का उदाहरण दिया जा सकता है। पहली है अज्ञेय का 'अपने-अपने अजनबी', जो पिछली शताब्दी के आठवें दशक में प्रकाशित हुआ, और दूसरी है उदय प्रकाश की चर्चित कहानी – 'और अंत में प्रार्थना' जो 1992 में हंस में प्रकाशित हुई थी। दोनों रचनाओं का सन्दर्भ और चिन्तन अलग है। अज्ञेय का उपन्यास विदेश की पृष्ठभूमि में लिखा गया था और पूर्ण रूप से उत्तर-आधुनिक पश्चिम साहित्य चिन्तन से प्रभावित है। उदय प्रकाश की पृष्ठभूमि भारतीय है और वह उन उलझी हुई सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं से जूझती है जिनका निराकरण दिखाई नहीं देता। इस प्रकार उदय प्रकाश की कहानी इस चिन्तन को पूर्ण रूप से भारतीय दृष्टि से देखती है। वह आधुनिकता और आधुनिकता की आड़ में छिपे मध्यकालीन बोध दोनों को ही पाठक के सामने नंगा करती है। [25]

निष्कर्ष

1. उत्तर-आधुनिकतावाद आधुनिकतावाद का विकास भी है और विलोम भी।

2. उत्तर-आधुनिकतावाद कृति की जगह पाठ पर जोर देता है। इसलिए एक ही रचना के कई पाठ हो सकते हैं। यानी उत्तर-आधुनिकतावाद में लेखक की जगह पाठक प्रमुख होता है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

3. उत्तर-आधुनिकतावाद व्यक्ति और सामाजिक इकाईयों की स्वतंत्रता का समर्थन करता है।

4. उत्तर-आधुनिकतावाद पूर्णतावादी दृष्टि का विरोध करता है। इस प्रकार वह समग्रता का विखंडन करता है।

5. उत्तर-आधुनिकतावाद हाशिए की आवाज़ को प्रमुखता देता है।

6. उत्तर-आधुनिकतावाद में ज्ञान की जगह सूचना का महत्त्व अधिक होता है|

हिंदी भाषा भाषियों को खास और पूरे भारत के लिए आमतौर पर उत्तर-आधुनिकतावाद की अवधारणा अभी समझ से परे है। कृषि प्रधान ग्रामीण जनसंख्या बहुलता वाले इस देश में जहाँ किसान और खेतीहर मजदूर हर रोज़ आत्म हत्या करने पर विवश हैं , जहाँ भीड़ तंत्र की हिंसा, साम्प्रदायिक दंगे, नक्सलवाद, आतंकवाद और उनके रक्षाकवच पत्थरबाज, भूख, बेकारी, और बीमारी अभी भी विद्यमान है वहाँ क्या आप उत्तर-आधुनिकतावाद को कैसे समझ पाएँगे? या फिर इसे ही उत्तर-आधुनिकता कहेंगे? उधर रेमंड विलियम कहते हैं कि यह जरूरी नहीं है कि उत्तर-आधुनिकतावादी अनुभव को आधुनिकतावाद की कसौटी पर देखा जाए और आधुनिकतावाद के साथ भी यही व्यवहार किया जाए। मनुष्य जीवन के दो पहलू हैं – वास्तविक और संभावित। उत्तर-आधुनिकतावाद पश्चिम के केवल वास्तविक पहलु पर ही जोर देता है क्योंकि वहां मनुष्य अपने माहौल में कैद है। वह स्थिति धीरे-धीरे तीसरी दुनिया के देशों में प्रवेश करने लगी है। इसलिए यह लेखक का दायित्व है कि वह उस स्थिति से निकलने का रास्ता भी दिखाए। रास्ता न दिखा सके तो कम से कम पाठक को इस स्थिति का बोध तो कराए। बीमारी का ईलाज करना ही बड़ी बात नहीं होती। कई बार बीमारी को सही ढंग से पहचान कर बीमार को इसका ज्ञान कराना भी एक बड़ा काम होता है। उत्तर-आधुनिकता आज वही काम कर रही है।[25]

संदर्भ

1. डॉ. सुधीष पचौरी-उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्ष, वाणी प्रकाषन, दिल्ली, 1996 ई, पृष्ठ-96
2. कृष्णदत्त पालीवाल-उत्तर आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2008 ई., पृष्ठ-33
3. देवषंकर नवीन-उत्तर आधुनिकताःकुछ विचार, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2000 ई.,पृष्ठ-18
4. डॉ. हेतु भारद्वाज-हिन्दी उपन्यास: उद्भव और विकास, पंचषील प्रकाषन, जयपुर, 2005 ई., पृष्ठ-178
5. कृष्णदत्त पालीवाल-उत्तर आधुनिकता और दलित साहित्य, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2008 ई. पृष्ठ-36
6. नमिता सिंह-अपनी सलीबंे, राधाकृष्ण प्रकाषन, नई दिल्ली, 1995 ई. पृष्ठ-32
7. सुधीष पचौरी-उत्तर यथार्थवाद, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2005 ई., पृष्ठ-126
8. सुधीष पचौरी-उत्तर आधुनिक साहित्यिक विमर्ष, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 1996 ई., पृष्ठ-166
9. रवीन्द्र त्रिपाठी का लेख-हंस, जुलाई 1994 ई., पृष्ठ-84
10. वीरेन्द्र जैन-डूब, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 1998 ई., पृष्ठ-93
11. कृष्णदत्त पालीवाल-उत्तर आधुनिकतावाद और दलित साहित्य, वाणी प्रकाषन, नई दिल्ली, 2008 ई., पृष्ठ-23
12. मनोहर श्याम जोशी-कुरु-कुरु स्वाहा, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 1983 ई.,पृष्ठ-127
13. मनोहर श्याम जोशी-कुरु-कुरु स्वाहा, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 1983 ई., पृष्ठ-73
14. मनोहर श्याम जोशी-कुरु-कुरू स्वाहा, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 1983 ई., पृष्ठ-64
15. मनोहर श्याम जोशी-हरिया हरक्यूलीज की हैरानी, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, पृष्ठ-115
16. श्री लाल शुक्ल-राग दरबारी, राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 2008 ई., पृष्ठ-12

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 7, July 2015

17. ईसर, देवेन्द्र, उत्तर-आधुनिकता : साहित्य और संस्कृति की नाई सोच, इंद्रप्रस्थ : दिल्ली
18. बर्लिन, एन.(1999), "ट्रेफिक ऑफ आवर स्टेज: व्हाय वेटिंग फॉर गोडोट?"दी मैसाचुसेट्स रिव्यू में, ऑटम
19. विमल, गंगाप्रसाद, आधुनिकता और उत्तर-आधुनिकता, नई किताब : दिल्ली
20. सिंघल, बैजनाथ, उत्तर आधुनिकता : स्वरूप और आयाम, हरियाणा साहित्य अकादमी : पंचकूला
21. पचौरी, सुधीश, उत्तर-आधुनिक साहित्यिक विमर्श
22. Ahmad, aziz (1992), in theory: classes, nations, literature, verso: London
23. Jencks, chares (1986), what is Post Modernism? Academy Edition: London
24. Jemison, Fredric (1991), post modernism or cultural logic of late capitalism, Duke University Press
25. Jean-François, Lyotard,(1984), the postmodern condition: A report on knowledge. Manchester university press: Manchester